REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 3 | DECEMBER - 2025

# धूमिल के काव्य में मानवीय नियति एवं राजनीति का अध्ययन

राजकुमारी पाण्डेय
शोधार्थी हिन्दी
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ लता द्विवेदी
सेवानिवृत्त प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हिन्दी
शासकीय विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

**सारांश –**

सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' का काव्य आधुनिक हिन्दी साहित्य में मानवीय नियति और राजनीति के द्वन्द्व और परस्पर सम्बन्ध का सूक्ष्म एवं प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करता है। उनके दृष्टिकोण में मानवीय नियति केवल व्यक्तिगत जीवन की परिस्थिति या अनुभव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संरचनाओं से गहराई से प्रभावित होती है। धूमिल के काव्य में यह नियति और राजनीति का समन्वय जीवन के यथार्थ, संघर्ष और नैतिक द्वन्द्वों को उद्घाटित करता है, जिससे पाठक को समाज, सत्ता और मानवीय संवेदनाओं के बीच उत्पन्न जटिलताओं का प्रत्यक्ष अनुभव होता है।

**मुख्य शब्द –** धूमिल, आधुनिक काव्य, हिन्दी साहित्य एवं मानवीय।

**प्रस्तावना –**

धूमिल हिंदी कविता के उन महत्वपूर्ण कवियों में हैं जिनकी दृष्टि समय, समाज और सत्ता की जटिलताओं को अत्यंत तीखे और निर्भीक रूप में पकड़ती है। उनकी कविता का मूल केंद्र मनुष्य की टूटती हुई आशाएँ, बदलती नियति, सामाजिक–राजनीतिक अन्याय और लोकतंत्र की विडंबनाएँ हैं। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब राजनीति अपने आदर्शों से भटक रही थी, भ्रष्टाचार बढ़ रहा था, लोकतंत्र मात्र औपचारिकता बनकर रह गया था और आम आदमी हाशिये पर धकेला जा रहा था तब धूमिल ने कविता को प्रतिरोध, प्रश्न और चेतना का माध्यम बनाया।

धूमिल के काव्य में मानवीय नियति उस सामान्य मनुष्य की स्थिति है जो सत्ता, व्यवस्था, गरीबी, शोषण और असमानताओं के जाल में फँसकर अपनी संभावनाएँ खोता हुआ दिखाई देता है। उनका मनुष्य संघर्षशील भी है और विडंबनाओं से त्रस्त भी परंतु वह अपने सवालों को दबाता नहीं, बल्कि उन्हें खुलकर सामने लाता है।

इसी के साथ धूमिल की कविता में राजनीति एक ऐसी शक्ति के रूप में उभरती है, जो आम जनता के जीवन को नियंत्रित करती है, परन्तु उसके हितों की रक्षा नहीं करती। "संसद से सड़क तक", "मोचीराम", "भागी हुई लड़कियाँ", "अकाल दर्शन" जैसी कविताओं में राजनीति का भ्रष्ट, स्वार्थी और दोगला चरित्र उजागर होता है। उनके लिए राजनीति आदर्शों से अधिक स्वार्थ और सौदेबाजी का खेल बन चुकी है। इस प्रकार धूमिल का काव्य एक ओर मनुष्य की दुःखद, संघर्षपूर्ण और अक्सर विडंबनापूर्ण नियति को व्यक्त करता है, तो दूसरी ओर उस नियति के निर्माण में राजनीति और व्यवस्था की भूमिका को गहराई से उजागर करता है। धूमिल की कविता केवल साहित्य न होकर समाज, सत्ता और मनुष्य की वास्तविकता का प्रखर दस्तावेज बनकर सामने आती है। धूमिल के काव्य में मानवीय नियति का स्वरूप बहुआयामी है। इसमें व्यक्ति का अस्तित्व, उसकी व्यक्तिगत पीड़ा, नैतिक द्वन्द्व और सामाजिक असमानताओं से उत्पन्न संघर्ष शामिल हैं। साथ ही, राजनीति का प्रभाव उनके काव्य में केवल बाहरी शक्ति या प्रशासनिक संरचना तक सीमित नहीं है, यह सत्ता, वर्गीय भेद, भ्रष्टाचार और समाज में मौजूद अन्याय के माध्यम से मानवीय नियति को प्रभावित करती है। इस दृष्टि से धूमिल का काव्य यथार्थवादी, संवेदनशील और आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

धूमिल के काव्य में मानवीय नियति और राजनीति के द्वन्द्व का संवेदनशील चित्रण पाठक को केवल भावनात्मक स्तर पर प्रभावित नहीं करता, बल्कि उसे सामाजिक, नैतिक और बौद्धिक विमर्श में सक्रिय रूप से संलग्न होने के लिए प्रेरित करता है। उनके दृष्टिकोण से, मानवीय नियति और राजनीति के बीच संबंध का अध्ययन समकालीन हिन्दी कविता को यथार्थवादी और विश्लेषणात्मक दृष्टि प्रदान करता है।

## विश्लेषण –

धूमिल के काव्य में मानवीय नियति एवं राजनीति उनके काव्य–संसार का केंद्रीय तत्व हैं। यह दृष्टि हिन्दी आधुनिक कविता को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि इसे समाज, सत्ता और मानवीय संघर्ष के बीच सक्रिय संवाद का मंच बनाती है, जिससे उनका साहित्यिक योगदान अध्ययन और विवेचन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण और स्थायी बन जाता है।

धूमिल को आजादी के बाद भारत अपनी पूरी दुर्दशा के साथ दिखाई देता है, धूमिल को लगा कि नेताओं ने राष्ट्र में कुछ भी उचित स्थान पर नहीं रहने दिया है –

''उन्होने किसी चीज को
सही जगह नहीं रहने दिया
न संज्ञा
न विशेषण
न सर्वनाम
एक समूचा और सही वाक्य
टूट कर
बिखर गया है।''[1]

धूमिल को महसूस होता है कि आजादी के पश्चात बीस वर्षों तक आजादी के नाम पर इस देश में जो कुछ हुआ है। वह मानवीयता के विरूद्ध हुआ है। कवि के निगाह में आजादी बन्दी हो गयी है, कवि ने इस भाव को निम्न रूपों मे व्यक्त किया है–

''आजादी इस दरिद्र परिवार की बीस साला 'बिटिया'
मासिक धर्म में डूबे हुए कुंवारेपन की आग से
अन्धे अतीत और लंगडे भविष्य की
चीलम भर रही है।''[2]

इस तरह कवि को लगता है कि अन्धे अतीत की सेवा करने वाली लंगड़े भविष्य को ढोने वाली यह आजादी निरर्थक हो गयी है आजादी का लाभ आम आदमी तक नही पहुँचा और न ही भविष्य में इसकी आशा की जा सकती है। व्यवस्था ने, आतंक और दमन की भाषा ने देश को कलंकित किया है। हमारा वर्तमान अतीत पर और भविष्य वर्तमान पर आधारित है, धूमिल ने जीवित अतीत को पहचानने का प्रयास करते हुए लिखा है –

''आह! वापस लौटकर
छूटे हुए जूतों में पैर डालने का वक्त नही हैं
बीस साल बाद और इस शहर में
सुनसान गालियों से चोरो की तरह गुजरते हुए
अपने आप से सवाल करता हुआ
क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हे एक पहिया होता है।''[3]

राष्ट्रीय जीवन में 1971 में पाकिस्तान से युद्ध भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पाकिस्तान सेनाओं की पराजय तथा बंगलादेश का निर्माण जहाँ भारतीयों के लिए आत्म गौरव बना। वहाँ भारत को भी शरणार्थी समस्या का भी सामना करना पड़ा। 'मेमन सिंह' कविता में शरणार्थी समस्या पर धूमिल ने मार्मिक दृष्टि डाली है कि यह समस्या भारत में आज भी विद्यमान है, जिसका समाधान देश के सामने आज भी नहीं है। उक्त कविता में मेमन सिंह एक शरणार्थी बनकर आता है। मगर कवि की हर चीज पर अपना अधिकार जमा लेता है, जो कवि शरणार्थियों के प्रति सहानुभूति रखता था वही कविता के अंत में क्रोधित होता हुआ कहता है –

''मेमन सिंह, मेमन सिंह लाले शरणार्थी
तुम आदमी नही–अजदहे हो।''[4]

धूमिल ने 1967 में बनी संविद सरकारों की भी आलोचना की है तथा नक्सलवादी आन्दोलन से उत्पन्न उग्रवादी बामपंथी आन्दोलन पर भी अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया है। वह कहते हैं –

''और भूख से
तनी हुई मुट्ठी का नाम
नक्सल वाड़ी है।''[5]

निःसन्देह यह कहा जाना यथार्थ लगता है कि धूमिल भ्रष्ट व्यवस्था के विरूद्ध हताश लोगों को दीनता त्याग कर क्रांति के लिए आवाहन करते है। धूमिल की कविताओं में सशस्त्र क्रांति विषयक परस्पर विरोधी विचार मिलते है। उन्हे लगता है कि भारत के विगड़े हालत को सुधारने के लिए क्रांति के सिवा कोई मार्ग बचा नही है।

समय किसी के लिए रुकता नहीं हमेशा गतिमान रहता है। इसी समय का विभिन्न रूपों में वर्णन कवि अपने ढंग से सदा ही करते आये हैं। कवि धूमिल की कविताओं में सामयिक राजनीति पूरी शिद्दत से उभरकर आयी है। एक आम आदमी किस तरह संसद से लेकर सड़क तक व्याप्त है उसी की गूंज जहाँ एक ओर राजनीति में सुनाई देती है वहीं दूसरी ओर कवि की कविताओं के मूल में है। धूमिल के इस संग्रह की कविताएँ समसामयिक राजनैतिक व्यवस्था की जकड़न के प्रति विद्रोह, विरोध और संघर्ष की दस्तावेज है। कवि का संघर्ष केवल दिखावा नहीं बल्कि नव निर्माण के संकेत का संघर्ष है। उनकी कविताओं में बम, आग, गोली जैसे शब्दों का प्रयोग हुआ है जो इस बात का सूचक है कि संघर्ष के रास्ते में जो भी रुकावट पैदा होगी, नाश करते हुए आगे बढ़ जाना होगा। 'कोडवर्ड', 'सुदामा पांडे का प्रजातंत्र', 'ताजा खबर', 'संसद समीक्षा', 'संयुक्त मोर्चा',

'लोकतंत्र', 'नौजवान, मुक्ति का रास्ता', 'गुफ्तगू मतदाता', 'चुनाव, सिलसिला', 'लोहसौंय', 'कमरा', 'खून का हिसाब', 'रात्रि भाषा', 'प्रस्ताव' आदि अनेक कविताओं में राजनीति के कई रंग बिखरे पड़े हैं–

''मैं तीन बार संसद कहूँगा
और चार बार संविधान :
हिंदुस्तानी लुकमे की आदती जुबान
दाँतों की दलबन्दी तोड़ कर बाहर
आ जाएगी।''[6]

धूमिल राजनैतिक दलबंदी की ओर संकेत करते हैं साथ ही नक्सलवादी राजनीति की भी चर्चा करते हैं। वास्तव में कोडवर्ड अपने आप में बहुत बड़ा व्यंग्यात्मक शब्द है। दाँतों की दलबंदी तोड़ना एक अलग प्रकार का बिंब देता है जहाँ सफल पार्टी के साथ विभिन्न पार्टियों के लोग जुड़ जाते हैं। इसी तरह देशवासियों की पसली से अपनी यात्रा रात में पूरी करना भूमिगत कारवाही की ओर संकेत करता है –

''युवा चेहरा
भूमिगत हो चुका है
मामूली तौर पर क्रूरता भी आज
जिंदा रहने के लिए
एक जरूरत बन गयी है।''[7]

इसी तरह 'सूखे की छायाएँ और एक शिशिर सन्ध्या' में भी राजनीतिक आपसी समझदारी की अभिव्यक्ति हुई है। सूर्यास्त के समय अनाज से भरे हुए जहाज की गंध का आना और उसे लूटने के लिए सैकड़ों मुखों का समुद्र की ओर घूम जाना समसामयिक स्थितियों की ओर संकेत करता है। इसी तरह धूमिल 'संयुक्त मोर्चा' में ज और न के मिलने से जन बन जाने की यथार्थवादी अभिव्यक्ति देते हैं। वे कहते हैं –

''कल तक वे चेहरे को चाकू –
और चाकू को चेहरा कहते थे
और हम इसे बुत की तरह सहते थे।''[8]

राजनीति में हर छोटी से छोटी वस्तु या घटना को राजनैतिक रंग दे दिया जाता है यहाँ तक कि एक अदद बटन और चुटकी भर आंटे की सुविधा के लिए भी –

''एक अदद बटन और चुटकी भर
आटे की सुविधा ने
हमें बागी बना दिया है
जब कि हमारी पीठ बुरी तरह
महसूसती है कि हमारी रीढ़ पर
दाँत भेड़ियों के गड़े हैं।''[9]

कवि देश की वर्तमान व्यवस्था से संतुष्ट नहीं रहे। जनतांत्रिक व्यवस्था से संबंधित उन्होंने जो सपने देखे थे, स्वतंत्रता के बाद वे टूट गये। जनता ने स्वतंत्र भारत में जीने के अलग सपने देखे थे। जब उनके

सपने टूटे तो उनके टूटने की गूँज हर कोई महसूस कर पाया। धूमिल मानते थे कि जनता को आगे बढ़कर शक्तिशाली बनकर सक्रिय होना है –

''हम दोनों मिलकर
अपने जानने और अपने नकारने का
एक संयुक्त मोर्चा बनाएँ
आज की भूख से भूख के अगले पड़ाव तक
लिख दें
यह रास्ता जनतंत्र को जाता है।''[10]

एक ओर राजनीति, धर्म, समाज के नाम पर शोषण था तो दूसरी ओर भूख, गरीबी और मँहगाई की मार थी। कवि देश की लचर प्रजातांत्रिक व्यवस्था तोड़कर दूसरी व्यवस्था की स्थापना चाहते थे और कविता को देश की मुक्ति का साधन भी मानते थे। उन्हें ऐसा लगता था कि सशस्त्र क्रांति तथा संघर्ष से नई व्यवस्था आ सकती है।

राजनैतिक षड्यंत्र करने वालों पर उन्होंने कई कविताओं में व्यंग्य किया है। राजनैतिक नेताओं द्वारा बौटी गई जनता को वे एक साथ लाना चाहते हैं। उन्हें हमेशा लगता है कि राजनीति एक ऐसा दलदल है जिसमें फंसकर व्यक्ति जंगली बन जाता है। वे कहते हैं –

''जबकि हमें निर्णय करना है
तो आओ एक निर्णय लें
हम दोनों मिलकर अपने जानने और अपने नकारने का
एक संयुक्त मोर्चा बनाएँ।''[11]

राजनीति में कैसी प्रजा और कैसा तंत्र, यह तो केवल आदमी के खिलाफ आदमी का खुलासा षड्यंत्र है –

''न कोई प्रजा है
न कोई तंत्र है
यह आदमी के खिलाफ
आदमी का खुलासा
षड्यन्त्र है।''[12]

कई बार कवि कटु शब्दों में राजनीति का वह पक्ष सामने रख देते है जिसकी चर्चा करना हर किसी रचनाकार के वश में नहीं होता। 'नौजवान' कविता में वह पूर्व प्रधानमंत्री को ही कविता के केंद्र में रख दिया –

''लहूलुहान एक गद्दीनशीन औरत
टाँगों में धमाका दबाए बैठी है
और सारा हिन्दुस्तान
जबड़े में भिंची हुई
कलेजी की तरह बमक रहा है
क्या तुम निहत्थे हो?''[13]

कई बार राजनैतिक अंधकार कवि के मन को निराशा से भर देता है और वे कहते हैं कि भूख के केंद्र में कोई भाषा नहीं होती। जिंदगी का हर सपना पूरा हो यह कोई जरूरी तो नहीं –

''और सोचो – हमारे बीच बैठे
हुए अंधकार से
हम कितनी दूर मार सकते हैं।
और देखो
रोशनी जहाँ सबसे तेज है
दुश्मन वहीं रहते हैं।''[14]

कवि का मानना था कि जिस देश की जनतांत्रिक व्यवस्था ठीक ना हो उसका विकास कैसे संभव है। राजनैतिक षड्यंत्रों के तले जनता पिस रही है। अब तो राजनीति में साधारण और सही व्यक्ति कम ही दिखाई देते है। इसी संदर्भ में डॉ. राकेश कुमार कहते हैं – ''राजनीति में साधारण और सही व्यक्ति भाग नहीं ले सकता। इसके लिए व्यक्ति का पूंजीपति, मुखौटाधर्मी होना अनिवार्य है क्योंकि व्यवस्था में वही व्यक्ति निर्वाचित होता है जो जनता को पैसे से खरीदता है।''[15]

राजनीति वोटों का खेल बनती जा रही है। बूथ कैप्चर कर लिए जाते हैं, राजनैतिक पार्टियों में साँठ गाँठ होती है, मतदान किये नहीं करवाए जाते हैं। इसलिए कवि धूमिल कहते हैं–

''मैं सोचता हूँ अपना परिवार
कल तक
हम अपने मतदान से बाहर
भरम में
एक हँसते गाते, पलते पलाते
लोकतन्त्र थे।''[16]

मतदाता कई बार पैसों से खरीदे जाते हैं और कई बार भूख और पेट मनुष्य से जो न करवाएँ वह कम है। 'मतदाता' कविता में धूमिल ने मतदाताओं पर होते शोषण और अत्याचार को व्यक्त किया है। यह सभी जानते हैं कि अभिव्यक्ति की आजादी जनतंत्र का प्राण तत्व है, किंतु ऐसा होता नहीं है, जो सच्चाई बोलता है उसका मुँह बंद कर दिया जाता है। आम आदमी अपना वोट भी अपनी मर्जी से नहीं डाल पाता –

''कहने का मतलब यह है कि भाइयों !
जनतन्त्र जनता से नहीं
घर की जंग से शुरू होता है''
और फिर पहली बार यह जानकर
वह खुश होगा कि मतपेटी में
मत पत्र के साथ वह अपनी समझ नहीं डाल आया
हैं आज भी –
अगली लड़ाई के लिए उसके दाँत और नाखून
एक रोटी पर सुरक्षित हैं।''[17]

आज भी प्रजातंत्र की दुर्दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। आज भी गरीबों को पूँजीपतियों और नेताओं से डरकर मतदान करना पड़ता है। देश की आम जनता चुनाव की वास्तविकता नहीं समझती। आज भी देश के

करोड़ों लोग ऐसे हैं जो मेहनत मजदूरी और भूस्वामियों के पास काम करके दो जून की रोटी की जुगत भिड़ानी पड़ती है। वोट पाने के लिए उनसे बार बार वादे किये जाते हैं किंतु उन्हें धोखे के अलावा कुछ नहीं मिलता –

''तब तक इसी तरह
बातों में चलते रहो
इसके बाद –
वादों की दुनिया में
धोखा खाने के लिए
कुछ भी नहीं होगा
और कल जब भाषा
भूख का हाथ छुड़ाकर
चमत्कारों की ओर वापस चली जाएगी।''[18]

राजनेता, संसद, शासन, संविधान आदि पर खोखले भाषण देकर स्वयं को देश प्रेमी सिद्ध करते हैं और बाद में आम आदमी की मेहनत का लाभ उठाकर कभी तो तितलियों के देश घूमते हैं और कभी विलासी साधन जुटाते हैं। कई बार देश हित के नाम पर संसद में एक प्रस्ताव लटका दिया जाता है जो कभी पूरा नहीं किया जाता –

''बहरहाल, वे सब जानते हैं
सिरकी पर टॅगी, मटमैली धोती, मामूली आड़ है
कोई संसद पटल नहीं, जहाँ देश हित के नाम
एक प्रस्ताव लटका दिया गया है।''[19]

अनेक मुखौटे पहनकर कुर्सियाँ हथिया ली जाती हैं। धीरे धीरे जनता निष्क्रिय होती जाती हैं किंतु कई बार जब इनकी धोखेबाजी से बेजार हो उठती है तो पूरी घृणा के साथ प्रतिवाद और संघर्ष पर उतर आती है–

''जिस वक्त कुर्सी अपने हाथ साफ कर रही है। छाती से
बमकते हुए खून की तरह उछलता है नौजवान
रक्त और कीचड़ से सना हुआ फौरी प्रतिवाद।''[20]

धूमिल यह मानते हैं कि प्रजातांत्रिक देश में जनता वैसे ही तिरस्कृत होती जा रही है जैसे संसद की कारवाही से निकाले गये वाक्य –

''मैं थोड़ी दूर और और आगे
जाना चाहता हूँ
जहाँ हवा काली है। जीने का
जोखम है। सपनों का
वयस्क लोक तन्त्र है। आदमी
होने का स्वाद है।
मैं थोड़ा और आगे जाना चाहता हूँ
जहाँ जीवन अब भी तिरस्कृत है
संसद की कार्यवाही से निकाले गये वाक्य की तरह।''[21]

धूमिल यह जानते है कि देश की शासन प्रणाली छीज रही है। देश में तब भी अशांति थी और अब भी है। अहिंसावादी राष्ट्र भारत में हिंसा, सोप्रदायिक दंगे आम बात हो गयी है।

## निष्कर्ष:

निष्कर्षतः सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' के काव्य में मानवीय नियति और राजनीति का द्वन्द्व उनके रचनात्मक व्यक्तित्व, सामाजिक चेतना और यथार्थवादी दृष्टि का केंद्रीय आयाम है। उनके काव्य में मानवीय नियति केवल व्यक्तिगत अनुभव या भावनात्मक संघर्ष तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संरचनाओं से गहराई से प्रभावित होती है। धूमिल ने अपने काव्य माध्यम से यह स्पष्ट किया कि व्यक्ति का अस्तित्व और नियति राजनीतिक और सामाजिक यथार्थ के प्रभाव से अविभाज्य रूप से जुड़ी होती है। उनकी कविताओं में राजनीति का प्रभाव केवल सत्ता या प्रशासनिक संरचना तक सीमित नहीं रहता, यह वर्गीय भेद, भ्रष्टाचार, सामाजिक अन्याय और शक्ति के असंतुलन के माध्यम से मानवीय नियति पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। इसी द्वन्द्व के चित्रण से उनके काव्य में यथार्थवाद, संवेदनशीलता और आलोचनात्मक दृष्टि स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। पाठक उनके काव्य से समाज और सत्ता के बीच उत्पन्न संघर्षों, नैतिक द्वन्द्वों और मानवीय पीड़ा पर विचार करने के लिए प्रेरित होता है। इस प्रकार धूमिल के काव्य में मानवीय नियति एवं राजनीति उनके काव्य–संसार का केंद्रीय तत्व हैं। यह द्वन्द्व हिन्दी आधुनिक कविता में सामाजिक चेतना, नैतिक विवेक और यथार्थवादी दृष्टि का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। धूमिल का यह दृष्टिकोण कविता को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहने देता, बल्कि इसे समाज, सत्ता और मानवीय संघर्ष के बीच सक्रिय संवाद का सशक्त मंच बनाता है, जिससे उनका साहित्यिक योगदान अध्ययन और विवेचन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण और स्थायी हो गया है।

## संदर्भ –

[1] धूमिल – संसद से सड़क तक–पटकथा, पृष्ठ 109
[2] धूमिल – संसद से सड़क तक–राजकमल चौधरी के लिए, पृष्ठ 31
[3] धूमिल – संसद से सड़क तक–बीस साल बाद, पृष्ठ 10
[4] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–मेमन सिंह, पृष्ठ 53
[5] धूमिल – संसद से सड़क तक–पटकथा, पृष्ठ 127
[6] धूमिल – संसद से सड़क तक–पटकथा, पृष्ठ 127
[7] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–कोडवर्ड, पृष्ठ 34
[8] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–संयुक्त मोर्चा, पृष्ठ 40
[9] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–संयुक्त मोर्चा, पृष्ठ 40–41
[10] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–संयुक्त मोर्चा, पृष्ठ 42
[11] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–संयुक्त मोर्चा, पृष्ठ 42
[12] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–सुदामा पांडे का प्रजातंत्र (दो), पृष्ठ 21
[13] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–नौजवान, पृष्ठ 68
[14] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–गुफ्तगू, पृष्ठ 78
[15] राकेश कुमार – धूमिल की काव्य चेतना : विविध आयाम, पृष्ठ 92
[16] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–ताजा खबर, पृष्ठ 32
[17] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–मतदाता, पृष्ठ 80

[18] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–चुनाव, पृष्ठ 81
[19] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–कमरा, पृष्ठ 104
[20] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–खून का हिसाब, पृष्ठ 107
[21] धूमिल – सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र–कर्फ्यू में एक घन्टे की छूट, पृष्ठ 43